International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 392-393

अष्टाङ्गयोग : एक समीक्षा

क्षमा
गवेषिका, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय दर्शनों में आत्मोन्नति के साधन रूप में योग की महत्ता को निर्विवादरूप से स्वीकार किया गया है। योग शब्द, युज् धातु में घञ् प्रत्यय लगकर बना है। पाणिनीय व्याकरण में युज् धातु, 'युज्–समाधौ धातु दिवादिगणीय (आत्मनेपदी), युजिर्–योगे धातु रुधादिगणीय (उभयपदी), युज्–संयमने धातु चुरादिगणीय (परस्मैपदी) अर्थों में आया है। किन्तु सांख्य योगशास्त्रों में चित्तवृत्तिनिरोध रूप में योग समाधिवाचक है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।[1]

महर्षि व्यास ने 'योगस्समाधिः' कहकर योग को समाधि बतलाया है। जिसका अभिप्राय है कि जीवात्मा योगरूपी समाधि के द्वारा सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है।

योगदर्शन पूर्णतया ईश्वरवादी है, इसके प्रवर्तक महर्षि पतञ्जलि ने योगसूत्र का प्रणयन किया था। पातञ्जलयोगसूत्र चार पादों में विभक्त है, प्रथम पाद समाधिपाद कहलाता है। इसमें योग के स्वरूप, उद्देश्य, लक्षण, चित्तवृत्तिनिरोध के उपाय और विभिन्न प्रकार के योगों की विवेचना की गयी है। द्वितीय साधनपाद कहा जाता है, इसके अन्तर्गत क्रियायोग, क्लेश, कर्म, फल और उनका दुःखात्मक स्वभाव, दुःखादि चतुष्टय (दुःख, दुःख का निदान, दुःख की निवृत्ति और दुःख की निवृत्ति के उपाय) आदि विषयों का वर्णन है। तृतीय विभूतिपाद है जिसमें अन्तरङ्ग अवस्थाओं तथा योगाभ्यास जातसिद्धियाँ का प्रतिपादन है। कैवल्यपाद नामक चतुर्थपाद में कैवल्य के स्वरूप के विषय में बताया गया है।

योगदर्शन में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान समाधि को योग का अङ्ग माना जाता है, जो अष्टाङ्ग योग के नाम से जाने जाते हैं।

यमनियमासानप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।[2]

इस पर प्रश्न उठता है, कि यम क्या है? इसको परिभाषित करते हुए आचार्य पतञ्जलि कहते है– 'अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह यम है।'[3] सब प्रकार से सदैव सब प्राणियों को पीड़ा न पहुँचाना अहिंसा है।[4] जो पदार्थ जैसा हो वैसी ही वाणी और वैसा ही मन होना सत्य है।[5] शास्त्राज्ञा के विपरीत दूसरों से द्रव्य ग्रहण करना स्तेय है। इच्छा के भी अभाव रूप का स्तेयाभाव अस्तेय है।[6] गुप्तेन्द्रिय का निग्रह ब्रह्मचर्य है।[7] विषयों की प्राप्ति, रक्षा और आसक्ति तथा हिंसादि दोषों के देखने के कारण स्वीकार न करना अपरिग्रह है।[8]

योगसूत्रकार नियम को स्पष्ट करते हुए कहते है– 'शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान' नियम है।[9] मिट्टी तथा जल से होने वाला तथा पवित्र भोजन आदि बाह्य शौच है। चित्त के दोषों का अपनयन अन्तः शौच है।[10] विद्यमान साधनों से अधिक साधनों का संग्रह करने की अनिच्छा संतोष है।[11] द्वन्द्वों को सहना तप है।[12] मोक्षशास्त्रों का अध्ययन अथवा ओङ्कार का जप स्वाध्याय है।[13] परमगुरू ईश्वर के प्रति सभी कर्मों का अर्पण ईश्वर प्रणिधान है।[14]

अष्टाङ्गयोगदर्शन के अन्तर्गत आसन के विषय में आचार्य पतञ्जलि का मत है कि ''वह शारीरिक स्थिति जो दीर्घकाल तक चञ्चलता से रहित और सुखप्रद हो, जैसे– पद्मासन, वीरासन, भद्रासन, पर्यङ्कासन प्रभृति योगाङ्गभूत आसन कहा जाता है।''[15]

आसन की सिद्धि हो जाने पर बाह्य वायु का ग्रहण श्वास और उदरस्थ वायु को बाहर निकालना प्रश्वास तथा इन दोनों की गति को एक साथ रोकना या अभाव ही प्राणायाम कहलाता है।[16] यह तीन प्रकार का होता है जिसमें श्वास के गतिविच्छेद से 'रेचक' प्रश्वास के गतिविच्छेद से 'पूरक' और दोनों के एक साथ अभाव से 'कुम्भक' नामक प्राणायाम होता है। यहाँ पर ध्यातव्य है कि प्राणायाम आसन के सिद्ध होने के पश्चात् ही करना चाहिए।

प्रत्याहार को परिभाषित करते हुए आचार्य पतञ्जलि कहते हैं कि ''इन्द्रियाँ स्वभाव से ही विषयोन्मुख होने के कारण, बाह्य विषयों की ओर प्रवृत्ति होती हैं, उनकी इसी प्रवृत्ति को अन्तर्मुख बनाना ही प्रत्याहार है।[17]

ऊपर वर्णित पञ्चयोगाङ्ग योग के बहिरङ्ग साधन है। निम्नलिखित तीन अङ्ग योग के अन्तरङ्ग साधन माने गये हैं–

चित्त को किसी स्थान विशेष जैसे, नाभिचक्र, हृदय–कमल, शीर्षप्रकाश नासिका के अग्रभाग में, जिह्वा के अग्रभाग इत्यादि आन्तरिक विषयों या सूर्यदेव में, हिरण्यगर्भ में आदि बाह्य विषयों में सात्विक वृत्ति से बाँधना धारणा है।[18]

ध्यान क्या है? इसे उत्तरित करते हुए आचार्य पतञ्जलि कहते हैं कि उस नाभिचक्रादि देश में, जिसमें धारणा की गयी हो, ज्ञान की अविच्छिन्न धारा ही ध्यान है।[19]

ध्यान के स्वरूप प्रतिपादन के पश्चात् पतञ्जलि 'समाधि' को व्याख्यायित करते हैं– 'अर्थमात्र के स्वभाव के आवेश होने के कारण, ध्यान ही जब अर्थमात्र के आकार से भासित होकर तथा अपने ज्ञानात्मक स्वरूप से रहित प्रतीत होता है, उसे समाधि कहते है।'[20]

सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात भेद से समाधि के दो भेद हैं। जो समाधि वितर्क, विचार, आनन्द और अस्मिता का अनुगम करने वाली होती है, वह सम्प्रज्ञात समाधि होती है।[21] जिसमें ध्येय विषय के स्थूल रूप का सम्प्रज्ञान वितर्कानुगतसम्प्रज्ञातसमाधि [22], सूक्ष्मरूप का सम्प्रज्ञान विचारानुगतसम्प्रज्ञात– समाधि [23], आह्लादरूप का सम्प्रज्ञान आनन्दानुगतसम्प्रज्ञात समाधि [24], और एकाकार बुद्धिरूप का सम्प्रज्ञान अस्मितानुगतसम्प्रज्ञात समाधि कहलाती है।[25]

परवैराग्य के अभ्यासपूर्वक तथा संस्कारमात्रावशिष्ट समाधि, सम्प्रज्ञात समाधि से भिन्न, असम्प्रज्ञात समाधि कही जाती है।[26] यह भवप्रत्यय और उपायप्रत्यय के भेद से दो प्रकार होती है। भवप्रत्यय

असम्प्रज्ञात समाधि, विदेहों तथा प्रकृतिलीनों को होती है।[27] योगियों को होने वाली उपायप्रत्यय असम्प्रज्ञात श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञापूर्वक होती है।[28]

इस प्रकार आठ सोपानों का पालन करते हुए सुदृढ़ और व्युत्थानरहित चित्त, निरोधसंस्कारों के साथ अपनी प्रकृति में लीन हो जाता है जिसके कारण पुरुषमात्र ही अवशिष्ट रहता है, फलस्वरूप साधक को कैवल्य प्राप्त होता है, जो योग का चरम लक्ष्य है। किन्तु वर्तमान में शरीर को कुशलतापूर्वक विभिन्न प्रकार से तोड़ना–मरोडना, श्वास–प्रश्वास को बहुत देर तक रोकना और एक स्थान पर आँख बन्द करके बैठना आदि को योग की संज्ञा दे दी गयी है, लेकिन भारतीय दार्शनिकों की दृष्टि में यह योग नहीं है, इसको हम केवल शारीरिक व्यायाम कह सकते हैं। अगर इसको हम योग कहेगे, तो खेलजगत् में हर नाविक, तैराकी और जिमनास्टिक इत्यादि योगी बन जायेगा, जो उचित प्रतीत नहीं होता है।

सन्दर्भ

1. योगसूत्र, 1/2
2. योगसूत्र, 2/29
3. अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः।–योगसूत्र, 2/30
4. अहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः–योगसूत्रभाष्य, 2/30
5. सत्यं यथार्थे वाङ्मनसे– योगसूत्रभाष्य, 2/30
6. स्तेयमशास्त्रपूर्वकं द्रव्याणां परतः स्वीकरणम्। तत्प्रतिषेधः पुनरस्पृहारूपमस्तेय मिति– योगसूत्रभाष्य, 2/30
7. ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः– योगसूत्र, 2/30
8. विषयाणामर्जनरक्षणक्षयसङ्गहिंसादोषदर्शनादस्वीकरणमपरिग्रहः– योगसूत्रभाष्य, 2/30
9. शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।–योगसूत्र, 2/32
10. शौचं मृज्जलादिजनितं मेध्याभ्यवहरणादि च बाह्यम्, आभ्यान्तरं चित्तमलानामाक्षालनम्।– योगसूत्रभाष्य, 2/32
11. संतोषः सन्निहितसाधनादधिकस्यानुपादित्सा।– योगसूत्रभाष्य, 2/32
12. तपो द्वन्द्वसहनम्–योगसूत्रभाष्य, 2/32
13. स्वाध्यायो मोक्षशास्त्राणामध्ययनं प्रणवजपो वा–योगसूत्रभाष्य, 2/32
14. ईश्वरप्रणिधानं तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्–– योगसूत्रभाष्य, 2/32
15. स्थिरसुखमासनम्।–योगसूत्र, 2/46
16. तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।–योगसूत्र, 2/49
17. स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः–योगसूत्र, 2/54
18. देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।–योगसूत्र, 3/1
19. तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।–योगसूत्र, 3/2
20. तदेवार्थमात्रानिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः–योगसूत्र, 3/3
21. वितर्कविचारानन्दाऽस्मितानुगमात्सम्प्रज्ञातः।–योगसूत्र, 1/17
22. वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोगः।–योगसूत्रभाष्य, 1/17
23. सूक्ष्मोविचारः–योगसूत्रभाष्य, 1/17
24. आनन्दोह्लादः–योगसूत्रभाष्य, 1/17
25. एकात्मिका संविदस्मिता––योगसूत्रभाष्य, 1/17
26. विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः –योगसूत्र, 1/18
27. भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम्–योगसूत्र, 1/19
28. श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम्–योगसूत्र, 1/20